विवाद निपटाने के लिए और सुझाव
(15:13–35)

विवाद अन्ताकिया में अपना कुरूप चेहरा दिखा चुका था। यरूशलेम से भाई, यह ज़ोर देते हुए आए थे कि अन्यजातियों के लोगों का खतना करवाना और मूसा की व्यवस्था को मानना आवश्यक है। यह संकट भरा समय था। यदि विवाद को सही ढंग से नहीं निपटाया जाता तो कलीसिया में फूट पड़ सकती थी, मसीही लोग दो गुटों में बंट जाते, एक ओर यहूदी मसीही हो जाते और दूसरी ओर अन्यजाति मसीही। पौलुस और बरनबास क्रोधित हो सकते थे। वे कह सकते थे, ''हम इन यहूदी मसीहियों की पूर्वधारणा से निपटते-निपटते तंग आ चुके हैं; हम अन्यजाति मसीहियों के लिए एक और मण्डली आरम्भ करने के लिए नगर के दूसरी ओर जा रहे हैं!'' इसके विपरीत, उन्होंने संयम रखा और मतभेदों को सुलझाने के लिए यरूशलेम चले गए।

विवाद से निपटने और सिद्धांतों की खोज करने के लिए हम प्रेरितों 15:1–35 के अपने अध्ययन को जारी रखेंगे। पौलुस और बरनबास की तरह, हमें एकता की खोज करने में सक्रिय होना आवश्यक है (मत्ती 5:9)।

बाइबल के समीप ही रहें
(15:13-19)

हमारा पिछला पाठ याकूब के प्रवचन के बीच समाप्त हुआ था जब हम कह रहे थे कि, सभी विवादों में हमें परमेश्वर के वचन के निकट रहना चाहिए। हम उस सच्चाई पर अधिक बल नहीं दे सकते। कोई विचार कितना भी आकर्षक क्यों न हो, यदि यह बाइबल से मेल नहीं खाता, तो यह परमेश्वर को नहीं भा सकता।

याकूब ने यह दिखाने के लिए कि कुरनेलियुस और उसके परिवार का मसीही बनना भविष्यवाणी का पूरा होना था, आमोस 9:11, 12 से उद्धृत किया। आइए याकूब के प्रवचन से उद्धरण लेते हैं, उसने जारी रखा:

> इसके बाद मैं फिर आकर दाऊद का गिरा हुआ डेरा उठाऊंगा, और उसके खंडहरों को फिर बनाऊंगा, और उसे खड़ा करूंगा। इसलिए कि शेष मनुष्य,[1] अर्थात सब

अन्यजाति जो मेरे नाम के कहलाते हैं,[2] प्रभु को ढूंढ़ें। यह वही प्रभु कहता है जो जगत की उत्पत्ति से इन बातों का समाचार देता आया है (आयतें 15:16-18)।[3]

इस भविष्यवाणी में दाऊद के राजवंश की बहाली की बात की गई जो यीशु के स्वर्गारोहण और महिमा पाने में पूरी हुई[4] और कहा कि यह होगा ताकि ''शेष मनुष्य'' प्रभु को देख सकेंगे। ''शेष मनुष्य'' विशेष तौर पर ''सभी अन्यजातियों'' को कहा गया है।

याकूब ने यह प्रमाणित कर दिया था कि परमेश्वर ने मसीही युग के लिए अपनी योजनाओं तथा उद्देश्यों में अन्यजातियों को शामिल कर लिया था, परन्तु इसका सम्बन्ध इस विषय से कैसे था कि अन्यजातियों का खतना होना और उनके लिए व्यवस्था का पालन आवश्यक था या नहीं? याकूब के उत्तर का आधार खामोशी था। आमोस ने ज़ोर दिया था कि अन्यजातियों को परमेश्वर की योजना में मिला लिया गया था, परन्तु इस नबी ने न तो यह कहा था और न ही कोई संकेत दिया था कि अन्यजातियों के लिए उन योजनाओं का भाग बनने से पहले यहूदी बनना आवश्यक होगा। याकूब ने निष्कर्ष निकाला, ''इसलिए मेरा विचार यह है, कि अन्यजातियों में से जो लोग परमेश्वर की ओर फिरते हैं, हम उन्हें दु:ख न दें'' (आयत 19)।[5] जैसे पिछले पाठ में ध्यान दिया गया था, ''कि हमें अन्यजाति मसीहियों पर खतना और व्यवस्था लाद कर उन्हें कष्ट नहीं देना चाहिए।''

दूसरों की भावनाओं के प्रति संवेदनशील बनें (15:20, 21)

याकूब ने यह घोषणा नहीं की, कि ''इसलिए,ऐसा ही होगा।'' बल्कि, उसने कहा, ''इसलिए *मेरा विचार* यह है [कि हमें ऐसा करना चाहिए]।'' उसने सभा पर अपना निर्णय थोपा नहीं; उसने विरोधी विचार रखने वालों से शांति से अपनी बात स्वीकार करवाकर उनके प्रति सम्मान दिखाया, दूसरों की भावनाओं के प्रति यह संवेदनशीलता सारी कहानी में रहती है।

सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए, मामले का सैद्धांतिक हल ढूंढ़ लिया गया था; पतरस, पौलुस, बरनबास, और याकूब सभी एक ही निष्कर्ष पर पहुंचे थे। परन्तु, एक समस्या का सामना अभी भी करना था। यहूदी मसीही जो उम्र भर व्यवस्था के अधीन रहे थे, अन्यजाति मसीहियों से मिलकर कैसे रह सकते थे जिन्होंने कभी व्यवस्था को माना ही नहीं था? अपने प्रवचन को समाप्त करते हुए, याकूब ने वहां उपस्थित लोगों को बताया कि यह भी उसका ही विचार था कि ''उन्हें लिख भेजें, कि वे मूरतों की अशुद्धताओं और व्यभिचार और गला घोंटे हुओं के मांस से और लोहू से परे रहें'' (आयत 20)।

बहुत से लोग इससे सहमत हैं कि आयत 20 की अन्तिम दो बातें मिलती-जुलती हैं और याकूब ने मूलत: तीन बातों के निषेध का उल्लेख किया: पहली ''मूर्तों की अशुद्धताओं'' के सम्बन्ध में थी। बाद में इसे ''मूर्तों के बलि किए हुओं'' (आयत 29) से जाना जाने लगा, जो मूर्तिपूजकों की वेदियों पर मांस के चढ़ावे के विषय में थी। वास्तव में इस मांस

का कुछ भाग ही वेदी पर जलाया जाता था। शेष मांस को या तो मूर्तिपूजक पुजारी या आराधना करने वाले खा लेते थे या बाज़ार में ऊंचे दाम पर बेच दिया जाता था, क्योंकि बलिदान के लिए अच्छे से अच्छे जानवर भेंट किए जाते थे। बहुत से अन्यजाति मसीही जीवन भर यही सब खाते रहे, परन्तु यहूदी मसीही यह मांस नहीं खाते थे और ऐसा करना बहुत घृणात्मक माना जाता था। दूसरा निषेध ''व्यभिचार'' या अवैध शारीरिक सम्बन्ध था।[6] परमेश्वर ने हमेशा ही व्यभिचार की निन्दा की थी, परन्तु बहुत से अन्यजातियों[7] ने इसे तब तक अहानिकर मनोरंजन माना था जब तक उन्हें अलग ढंग से सिखाया नहीं गया। सिनिका ने अपने समय की लैंगिक अनैतिकता के बारे में लिखा, ''मासूमियत दुर्लभ नहीं; इसका तो अस्तित्व ही नहीं है।''

तीसरा निषेध था ''गला घोंटे हुओं के मांस से और लोहू से परे रहें।'' बाद की सदियों में, टीकाकारों ने ''लोहू'' शब्द को हत्या के लिए प्रयुक्त किया था, परन्तु प्रेरितों 15 अध्याय में शब्द ''गला घोंटे हुओं'' और ''लोहू'' सम्भवत: अन्यजातियों द्वारा लोहू में मांस खाने और पशुओं का लहू पीने की प्रथाओं के लिए प्रयुक्त हुआ।[8] यहूदी व्यक्ति किसी पशु को काटते समय उसके लहू को भूमि पर या वेदी पर गिराकर[9] बहा देता था[10] (लैव्यव्यवस्था 17:10-14; व्यवस्थाविवरण 12:16, 23-25) क्योंकि परमेश्वर ने बताया था कि ''शरीर का प्राण लोहू में रहता है'' (लैव्यव्यवस्था 17:11)। एक विवेकी यहूदी किसी अन्यजाति द्वारा तैयार किए गए किसी भी मांस के प्रति संदेह रखेगा।

हम निश्चित रूप से तो नहीं कह सकते कि याकूब ने निषेध के लिए इन तीन बातों को अलग क्यों किया, परन्तु हम कुछ अनुमान लगा सकते हैं: पहला, इन निषेधों में अन्यजातियों की सामान्य रीतियों को बताया गया था, ऐसी रीतियां जो सम्भवत: तब तक अन्यजाति मसीहियों[11] की जीवनशैली का भाग थीं, जब तक उन्हें अलग ढंग से सिखाया नहीं गया था। दूसरा, सभी तीन बातों से जिनकी याकूब ने मनाही की थी, कलीसिया में यहूदियों और अन्यजातियों की संगति प्रभावित हुई। तीन में से दो ने ''मेज की संगति'' को प्रभावित किया, जो कि परमेश्वर के परिवार में एक महत्वपूर्ण प्रथा है।[12] तीसरा, इन तीन निषेधों में से कोई भी विशेष रूप से यहूदियों के लिए नहीं था। मूर्तिपूजा, व्यभिचार, और लहू खाना मूसा की व्यवस्था में पहले ही गलत माने जाते थे।[13] अन्यजातियों के लिए जल प्रलय के समय से ही इन विषयों पर नियम थे, सो याकूब अन्यजातियों से बिना किसी विरोध के इनसे दूर रहने का आग्रह कर सका जब उसने कहा कि अन्यजातियों को व्यवस्था का पालन करने की आवश्यकता नहीं।

वस्तुत:, याकूब अन्यजाति मसीहियों को कह रहा था, कि ''अन्यजातियों के व्यवस्था को मानने के सम्बन्ध में हम यहूदी मसीहियों ने तुम्हारे पक्ष में निर्णय लिया है। अब आप उन कार्यों से दूर रहकर जो हमें बेचैन करते हैं, *हमारा* पक्ष लें।'' भाइयों से किसी बात पर असहमत होने पर भी हमें उनकी भावनाओं के प्रति संवेदनशील रहना चाहिए।

याकूब ने संवेदनशीलता पर एक और बात कहकर प्रवचन समाप्त किया। यहूदियों को जो अन्यजातियों पर व्यवस्था थोपना चाहते थे, सम्भवत: यह भय था कि कुछ समय बाद

किसी को यह पता नहीं होगा कि मूसा की व्यवस्था क्या थी। याकूब ने उन्हें बताया कि घबराएं नहीं: ''क्योंकि पुराने समय से नगर-नगर मूसा की व्यवस्था के प्रचार करने वाले होते चले आए हैं, और वह हर सब्त के दिन आराधनालय में पढ़ी जाती है'' (आयत 21)।[14]

सत्य को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करने योग्य बनें (15:22, 25)

याकूब के प्रवचन के समाप्त होने पर एक असाधारण और आश्चर्यजनक बात हुई कि सारी मण्डली एक बात पर सहमत हो गई। आयत 22 कहती है कि ''तब *सारी कलीसिया सहित* प्रेरितों और प्राचीनों को अच्छा लगा'' कि याकूब की सिफारिश के अनुसार अन्ताकिया की कलीसिया को पत्र लिखा जाए। पत्र में उन्होंने लिखा कि ''हम ने *एक चित्त होकर* ठीक समझा'' कि ऐसा हो (आयत 25)। स्पष्टतया, खतना करने की बात थोपने वालों ने पतरस, पौलुस, बरनबास, और याकूब के आत्मा की प्रेरणा से मिले निर्णय को स्वीकार किया।[15] यदि ऐसा हुआ (और लगता है कि ऐसा ही हुआ), तो वे आज के उन बहुत से लोगों से बड़े थे जो अपनी बात पर ''या किसी काम में'' अड़ जाते हैं। कोई ऐसा मामला न होने पर जिसमें आत्मिक सिद्धांत हो, जिसके लिए कोई समझौता न हो सकता हो।[16] यदि बहुमत व्यक्तिगत विचारों से भिन्न हो, तो हमें बहुमत की बात को मान कर निर्णय को सर्वसम्मत बना देना चाहिए।

इसे व्यक्तिगत रखें (15:22-29)

पत्र भेजने का निर्णय लेने के बाद, ''सारी कलीसिया सहित प्रेरितों और प्राचीनों'' ने ''अपने में से कई मनुष्यों को'' चुना कि ''उन्हें पौलुस और बरनबास के साथ अन्ताकिया को भेजें'' (आयत 22क)। हमें इस निर्णय में समझदारी का अहसास होता है। यदि पौलुस और बरनबास अकेले पत्र लेकर लौटते, तो संदेह करने वाले कहते कि उन्होंने पत्र स्वयं लिखा था। प्रतिनिधियों को भेजने से इसकी सम्भावना जाती रही। पत्र ले जाने के लिए दो पुरुषों: ''यहूदा, जो बरसब्बा[17] कहलाता है, और सीलास[18] को जो भाइयों में मुखिया थे''[19] (आयत 22ख) और नबी भी थे (आयत 32), को चुना गया था। पत्र में बताया गया कि उन्हें क्यों भेजा गया था:''हम ने यहूदा और सीलास को भेजा है, जो अपने मुंह से भी ये बातें कह देंगे'' (आयत 27)। यहूदा और सीलास यह पुष्टि कर सकते थे कि पत्र सही था और लोगों के प्रश्नों के उत्तर दे सकते थे।

ध्यान दें कि पत्र आत्मा की प्रेरणा से दिया गया था। पत्र के अन्त में हम इन शब्दों को पढ़ते हैं: '' *पवित्र आत्मा को,* और हम को ठीक जान पड़ा कि ... ; तुम पर और बोझ न डालें'' (आयत 28)। परमेश्वर की प्रेरणा से दिया गया यह प्रथम ज्ञात पत्र है। यह एक और प्रमाण है कि यरूशलेम की सभा आज की साम्प्रदायिक कलीसियाओं की काउंसिलों और कॉन्फ्रेंसों की तरह नहीं थी: उन बैठकों में पवित्र आत्मा की प्रेरणा प्राप्त कोई दस्तावेज़ नहीं बनाए जा सकते हैं और न ही बनते हैं।

संवेदनशीलता का नमूना, वह पत्र उस समय के प्रचलित नमस्कार के साथ आरम्भ हुआ: ''और उनके हाथ यह लिख भेजा, कि अन्ताकिया और सूरिया और किलिकिया के रहनेवाले भाइयों को जो अन्यजातियों में से हैं, प्रेरितों और प्राचीन भाइयों का नमस्कार'' (आयत 23)। अन्ताकिया, जहां विवाद आरम्भ हुआ था सीरिया और किलिकिया प्रदेशों की राजधानी थी।[20] ''भाइयों'' शब्द को रेखांकित कर लें; सबसे पहले यरूशलेम की कलीसिया ने अन्ताकिया में मसीही लोगों के साथ अपने पारिवारिक सम्बन्ध को स्वीकार किया।

पत्र में आगे ज़ोर दिया गया कि जो अन्ताकिया में आए थे, वे यरूशलेम की कलीसिया के प्रतिनिधि नहीं थे और उनके द्वारा उन्हें कष्ट पहुंचाने पर अपनी चिन्ता व्यक्त की गई:

> हमने सुना है, कि हम में से कितनों ने वहां जाकर तुम्हें अपनी बातों से घबरा दिया; और तुम्हारे मन उलट दिए हैं[21] परन्तु हमने उनको आज्ञा नहीं दी थी। इसलिए हमने एक चित्त होकर ठीक समझा, कि चुने हुए मनुष्यों को अपने प्यारे बरनबास और पौलुस[22] के साथ तुम्हारे पास भेजें। ये तो ऐसे मनुष्य हैं, जिन्होंने अपने प्राण हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम के लिए जोखिम में डाले हैं। और हमने यहूदा और सीलास को भेजा है, जो अपने मुंह से भी ये बातें कह देंगे (आयतें 24-27)।

पौलुस और बरनबास के व्यक्तित्व और काम के प्रति दिखाया इतना सम्मान अन्ताकिया की कलीसिया के लिए मैत्रीपूर्ण टिप्पणी होगी।

पत्र याकूब की सिफारिश से लगाए गए निषेधों के साथ समाप्त हुआ:

> पवित्र आत्मा को, और हम को ठीक जान पड़ा कि इन आवश्यक बातों को छोड़; तुम पर और बोझ न डालें; कि तुम मूरतों के बलि किए हुओं से, और लोहू से, और गला घोंटे हुओं के मांस से, और व्यभिचार से, परे रहो। इन से परे रहो; तो तुम्हारा भला होगा। आगे शुभ (आयतें 28, 29)।

मैं इस तथ्य को रेखांकित कर लेता हूं कि यरूशलेम में भाई केवल इस पत्र पर निर्भर नहीं थे; उन्होंने पत्र के साथ दो व्यक्ति भी भेजे। उन्होंने यह सुनिश्चित किया कि उनके उत्तर में *व्यक्तिगत स्पर्श* था।

नि:संदेह पत्रों का बड़ा महत्व हो सकता है।[23] यह आम तौर पर अच्छा होता है कि ''सब कुछ लिख कर रखा जाए।'' दूसरी ओर, मैंने देखा है कि पत्र, विशेषकर क्रोध में लिखे पत्र विवाद को सुलझाने के बजाय आग में तेल डालने का काम करते हैं।[24] पत्रों में त्रुटियां होती हैं। यदि पढ़ने वाला पत्र के विषय को गलत समझ ले, तो लिखने वाला उसे यह बताने के लिए वहां उपस्थित नहीं होता कि उसके लिखने का क्या अर्थ था। यदि पत्र में कुछ ऐसी बातें हैं जिनकी आलोचना हो सकती है, वे बातें आमने-सामने बातचीत में शायद न ''कही'' जातीं। बल्कि, प्राप्तकर्ता उन्हें जितनी बार पढ़ता है, उतनी बार ही निराश होता है।[25]

यदि आप कलीसिया के किसी विवाद में शामिल हैं, तो आपके लिए पत्रों के विषय में मेरा सुझाव दोहरा है: (1) यदि आपको पत्र लिखना *ही हो,* तो उसे उसी संवेदनशीलता से लिखें जैसे यरूशलेम वालों ने लिखा। साधारण नियम के अनुसार, यदि आप परेशान हों तो पत्र न लिखें; या यदि लिखें, तो इसे भेजने से पहले कई दिन प्रतीक्षा करें और इसे भेजने से पूर्व सावधानीपूर्वक और प्रार्थनापूर्वक कई बार पढ़ें। (2) यदि दूसरे पक्ष के साथ सीधे बात करना सम्भव हो, तो पत्र *न* लिखें। किसी को आपत्ति हो सकती है, ''परन्तु जब मैं किसी के सामने होता हूं तो मुझे पता नहीं चलता कि क्या बोलूं। मैं अपनी बात को पत्र द्वारा अच्छी तरह बता सकता हूं।'' तो फिर यरूशलेम के भाइयों से सीखें: पत्र लिखें, परन्तु इसे *व्यक्तिगत रूप से* दें; ताकि जब पत्र पढ़ा जाए तो आप उन प्रश्नों के उत्तर देने के लिए वहां उपस्थित हों।

दूसरों के साथ व्यवहार में, हमेशा व्यक्तिगत स्पर्श रखें!

सकारात्मक रुख अपनाएं (15:30-35)

विश्वास करें या न, परन्तु यदि हम सकारात्मक सोच अपनाएं और मामले को सही ढंग से निपटाएं तो विवाद से भी भलाई निकल सकती है। विवाद से कठिनाइयां बढ़ सकती हैं जिनसे आरम्भ में ही निपट लेना चाहिए। हो सकता है कि विवाद हमें समस्याओं का फिर से अध्ययन करने के लिए बाध्य करे और हमें परमेश्वर की इच्छा की समझ आ जाए। विवाद हमें उन सम्बन्धों पर काम करने के लिए बाध्य कर सकता है जिनकी ओर हमने ध्यान नहीं दिया। 30 से 35 आयतें प्रेरितों 15 के विवाद को सही ढंग से सुलझाने के सकारात्मक परिणामों के बारे में बताती हैं।

(1) वहां आनन्द हुआ। पौलुस और बरनबास, यरूशलेम से आने वाले प्रतिनिधियों के साथ, ''विदा होकर अन्ताकिया में पहुंचे, और सभा को इकट्ठी करके वह उन्हें पत्री दे दी। और वे पढ़कर उस उपदेश की बात से अति आनन्दित हुए'' (आयतें 30, 31)। अन्ताकिया में भाई उत्साहित हुए थे क्योंकि यह फैसला हो गया था कि अन्यजातियों को व्यवस्था का पालन करने की आवश्यकता नहीं; वे उत्साहित हुए थे क्योंकि विवाद खत्म हो गया था; वे उत्साहित हुए थे क्योंकि जो बिनतियां की गई थीं, वे कठिन नहीं थीं।[26]

(2) परमेश्वर के वचन का प्रचार होता रहा। ''और यहूदा और सीलास ने जो आप भी भविष्यवक्ता थे, बहुत बातों से भाइयों को उपदेश देकर स्थिर किया''[27] (आयत 32)। आयत 35 ध्यान दिलाती है कि ''पौलुस और बरनबास अन्ताकिया में रह गए और बहुत और लोगों के साथ[28] प्रभु के वचन का उपदेश करते, और सुसमाचार सुनाते रहे।''

(3) यहूदियों और अन्यजातियों के बीच सम्बन्ध मधुर हो गए थे। आयत 33 कहती है कि ''वे [यहूदा और सीलास] कुछ दिन रहकर भाइयों से शान्ति के साथ विदा हुए,[29] कि अपने भेजनेवालों के पास जाएं।'' ''शान्ति के साथ ... अपने भेजने वालों के पास जाएं'' से संकेत मिलता है कि अन्ताकिया के भाइयों ने इन आने वाले लोगों और जिन्होंने उन्हें भेजा था, की प्रशंसा की।[30]

विवाद के बीच सकारात्मक रुख रखना कठिन है। प्रभु की प्रतिज्ञा को पकड़े रखें ताकि वह ऐसा कुछ करे जिससे ''सब बातें मिलकर भलाई ही को उत्पन्न'' करें (रोमियों 8:28) और हियाव न छोड़ें!

सारांश

प्रेरितों 15:1-35 की जांच में, हमने मण्डली में आने वाले विवाद से निपटने में सहायता के लिए बहुत से सिद्धांतों को खोज लिया है चाहे वह शिक्षा सम्बन्धी असहमति हो, जिसे प्रेरितों 15 में सुलझाया गया था, या विचार की भिन्नता हो। जो कुछ हमने अध्ययन किया उसे संक्षिप्त कैसे किया जा सकता है? प्रेरितों 15 से निकला ''एकता के लिए फॉर्मूला'' मुझे अच्छा लगता है: ''अनुग्रह का प्रचार करो और प्रेम का व्यवहार करो।'' पतरस ने कहा, ''हम प्रभु यीशु के अनुग्रह से उद्धार पाते हैं'' (आयत 11)। इस पाठ में और इससे पहले के एक पाठ में, हमने नम्र, विचारशील, नि:स्वार्थ, और संवेदनशील होने पर ज़ोर देने का यत्न किया है। इस सब को एक शब्द ''प्रेम'' से संक्षिप्त किया जा सकता है। असहमति किसी भी बात पर क्यों न हो, ''जो कुछ करते हो *प्रेम से* करो'' (1 कुरिन्थियों 16:14)। जब आपको सच्चाई के लिए खड़ा भी होना पड़े तो बिना द्वेष के खड़े रहें (इफिसियों 4:15)।

पाद टिप्पणियां

[1]बाइबल के पुराने नियम (जो इब्रानी शास्त्र पर आधारित है) आमोस 9:12 में, आपको एदोमियों का एक हवाला मिलेगा। सप्तति (यूनानी) अनुवाद में सारी मनुष्यजाति का अधिक सामान्य हवाला है। याकूब स्पष्टतया सप्तति अनुवाद से ही उद्धृत कर रहा था। [2]''सब अन्यजाति जो मेरे नाम के कहलाते हैं'' (आयत 17) पर एफ़. एफ़. ब्रूस ने यह टिप्पणी की: ''सब अन्यजाति जो मेरे नाम से पुकारे जाते हैं (अर्थात, बपतिस्मे के द्वारा)।'' [3]बहुत से प्रिमिलेनियलिस्ट लोगों अर्थात पृथ्वी पर यीशु के हज़ार वर्ष के राज्य की शिक्षा देने वालों की शिक्षा है कि आमोस 9:11, 12 पृथ्वी पर यीशु के लौटने पर पूरा होगा (''प्रेरितों के काम, भाग-1'' की शब्दावली में देखिए ''प्रिमिलेनियलिस्ट'')। परन्तु, याकूब ने, इस पद को यह प्रमाणित करने के लिए इस्तेमाल किया कि परमेश्वर ने सुसमाचार को अन्यजातियों में प्रचार करना चाहा। यदि आमोस 9:11, 12 पूरा *नहीं* हुआ जैसे याकूब ने बताया, तो किसी भी यहूदी को मसीही बनने की अनुमति नहीं होनी चाहिए (और उनमें हम में से अधिकतर लोग आते हैं)! [4]यहूदी लोग दाऊद के तम्बू को फिर से बनाने की बात को मसीह के आने पर इस्राएल के भाग्य को सुधारना समझते थे। जैसे हमने देखा, दाऊद के सिंहासन और राज्य के बहाल होने से सम्बन्धित पुराने नियम की भविष्यवाणियां यीशु में पूरी हो गई थीं (प्रेरितों के काम की इस शृंखला के एक आरम्भिक भाग में 1:6; 2:30; 3:21 पर नोट्स देखिए)। [5]वक्ताओं के बोलने की तरतीब का निर्णय सम्भवत: गलतियों 2:2-10 की गुप्त सभा में लिया गया था, कि याकूब बाद में बोलेगा क्योंकि उसकी बात उनसे जो ज़ोर देते थे कि अन्यजातियों का खतना होना आवश्यक है, अधिक प्रभावी होनी थी। इसी कारण से, सम्भवत: यह पहले से तय कर लिया गया था कि वह ही दृढ़ता से बात करे कि अन्यजातियों को व्यवस्था का पालन करने की आवश्यकता *नहीं* थी। [6]दूसरी अन्य बातों का सम्बन्ध विशेष तौर पर यहूदी-अन्यजाति सम्बन्धों से था, इसलिए कइयों का मानना है कि शब्द ''व्यभिचार'' यहां पर विशेष तौर पर निकट सम्बन्धियों के साथ शादी करने के विषय में व्यवस्था की पाबंदियों के लिए कहा गया है (लैव्यव्यवस्था 18:6-18)। [7]लगता है कि सारे संसार की पुस्तकें, फिल्में, और टीवी कार्यक्रम बनाने वाले बहुत से लोग ऐसे ही मनोरंजक विचार रखते हैं। [8]किसी मूर्ति के सामने बलिदान किए जाने के

बाद, जानवर का कुछ लहू आराधना करने वाला ही पीता था। इसके अतिरिक्त, एक बलवान पशु का लहू पीना सामान्य प्रथा थी, क्योंकि कई लोगों का मानना था कि जानवर का लहू पीकर उनमें उसकी शक्ति आ जाएगी। कई तो इसी कारण से हारे हुए शत्रु का लहू भी पी लेते थे।[9]यदि उन्होंने एक जानवर को बलिदान के लिए काटना होता, तो लहू वेदी पर बहा दिया जाता था। यदि जानवर को खाने के लिए काटना होता, तो वे लोहू को भूमि पर बहा देते थे।[10]किसी जानवर को काटने के लिए आज अमेरिका तथा अन्य बहुत से (शायद अधिकतर) समाजों में यही ढंग अपनाया जाता है।

[11]सदी के अन्त तक अन्यजाति मण्डलियां अभी भी इसी प्रकार के पापों का सामना कर रही थीं (देखिए प्रकाशितवाक्य 2:14, 20)। [12]''प्रेरितों के काम, भाग-1'' के पृष्ठ 44 पर 2:46 पर नोट्स देखिए। [13]लहू खाने की मनाही के लिए, देखिए उत्पत्ति 9:4। [14]लेखक इस बात से असहमत है कि याकूब ने अपने प्रवचन को इस प्रकार समाप्त क्यों किया। पाठ में दी गई मेरी व्याख्या एक सम्भावना है। [15]यह सम्भव है कि खतना करवाने की शिक्षा देने वाले छोड़ गए जब उन्होंने देखा कि सभा चल रही है और इसलिए जब सर्वसम्मति से निर्णय लिया गया तो वे वहां नहीं थे। यह भी सम्भव है कि शब्द ''सारी कलीसिया'' हर एक व्यक्ति की सहमति न होकर सामान्य सहमति की बात हो। परन्तु, शास्त्र को समझने का अति स्वाभाविक ढंग यह है कि मीटिंग के अन्त तक हर कोई वहां रहा और हर कोई अंतिम निर्णय पर एकमत था। [16]विश्वास की बातों में, साधारणतया ''बहुसंख्या'' की स्थिति की बात होती है (निर्गमन 23:2; मत्ती 7:13, 14)। [17]''यहूदा जो बरसबा कहलाता है'' के बारे में हम और कुछ नहीं जानते। क्योंकि उसका घर का नाम बरसबा (''सब्त का बेटा'') था, इसलिए कइयों ने अनुमान लगाया है कि हो सकता है वह ''यूसुफ जो बरसबा कहलाता है'' का भाई हो (1:23 और ''प्रेरितों के काम, भाग-1'' में उस पर नोट्स देखिए) लेकिन दो भाइयों का एक ही नाम हो, मैं इसकी कल्पना नहीं कर सकता। [18]सीलास से हमारा परिचय इतना ही है, जो पौलुस के सफ़र का साथी बनेगा। सीलास पर अधिक जानकारी के लिए, पृष्ठ 152 पर ''एक टीम-और उसके आगे'' पर नोट्स देखिए। [19]यूनानी शब्द का अनुवाद ''मुखिया'' उसी मूल शब्द से है जिससे इब्रानियों 3:17 में ''अगुओं'' है, जिससे कई लोग अनुमान लगाने लगते हैं कि यहूदा और सीलास यरूशलेम में प्राचीन थे या नहीं। यरूशलेम की कलीसिया के लिए अपना प्रतिनिधित्व करने के लिए अपने प्राचीनों में से दो को भेजने की बात का कुछ अर्थ है। [20]पौलुस ने बाद में इस पत्र को गलतिया और फ्रुगिया की कलीसियाओं में साझा किया (16:4-16)। उस समय यह कितनी दूर ले जाया गया था, हमें नहीं पता। बेशक, प्रेरितों के काम में लूका द्वारा इसे शामिल करने से अन्ततः सारे मसीही भाईचारे में पत्र पहुंच गया। [21]यूनानी भाषा में, अनुवादित शब्द ''घबरा दिया'' और ''उलट दिए'' अन्ताकिया में हुए विवाद की गंभीरता की ओर संकेत करते हैं। यह ऐसा विवाद था जिससे मण्डली में फूट का भय बन गया। [22]पुनः, बरनबास का उल्लेख यरूशलेम में उसके प्रमुख होने के कारण पहले किया गया। [23]नये नियम की सताइस पुस्तकों में से इक्कीस तो पत्रियां ही हैं। [24]यह चर्चा बेनाम पत्रियों के भेजने के बारे में कुछ नहीं कहती। यकीनन ही हर मसीही महसूस करता है कि कुछ तथ्य आलोचना के बेनाम पत्र भेजने से अधिक कायरतापूर्ण हैं! [25]तीसरी कमी यह है कि विवादास्पद पत्रों को सम्भालकर, फाइल किया जा सकता है और कितने भी लोगों तक पहुंचाया जा सकता है, जिससे हरे भरे मैदान में आग लगने के जैसा विवाद बढ़ सकता है। [26]अन्यजाति मसीही उन बिनतियों को मानने के लिए प्रसन्न थे। यदि विवादों को सुलझाना हो, तो *दोनों* पक्षों को थोड़ा सा ''त्याग'' करने के लिए तैयार रहना चाहिए। [27]''लम्बे संदेश'' कई बार तरतीब में होते हैं (20:7 भी देखिए)। [28]देखिए प्रेरितों 13:। [29]आम विदायगी में कहा जाता था ''शांति से जाओ।'' [30]कुछ लेखों में आयत 34 के शब्द शामिल हैं, ''[परन्तु सीलास को वहां रहना अच्छा लगा],'' परन्तु बहुत से हस्तलेखों में ये शब्द नहीं मिलते। सम्भवतः उन्हें किसी लेखक ने यह व्याख्या करने के लिए कि जब पौलुस ने सीलास को अपनी दूसरी यात्रा में जाने के लिए चुना तो वह कैसे उपलब्ध हुआ (15:40)। परन्तु, और भी सम्भावनाएं हैं: सीलास चला गया हो सकता है और बाद में लौट आया या पौलुस ने यरूशलेम में उसे बुला लिया (या वह उसे यरूशलेम में लेने गया) हो।